सुरेश कुमार भीकमचंद जैन

बनाम

महाराष्ट्र राज्य और अन्य। (विशेष अनुमति याचिका (आपराधिक) संख्या 147, 2013)

13 फरवरी, 2013

अल्तमस कबीर, सीजेआई, जे. चेलमेश्वर और

विक्रमाजीत सैन जे.जे.-

आपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1973:

धारा 167 (2) वैधानिक जमानत -निर्धारित अवधि के भीतर आरोप-पत्र दायर किया गया, लेकिन अभियोजन मंजूरी प्राप्त नहीं होने के कारण संज्ञान नहीं लिया गया - माना गया: स्वीकृति की मंजूरी धारा 167 के तहत कहीं भी परिकल्पित नहीं है। - एक बार आरोप-पत्र दायर किया गया है निर्धारित समय सीमा के भीतर, डिफ़ॉल्ट जमानत या वैधानिक जमानत देने का सवाल ही नहीं उठता - आरोप पत्र दाखिल करना वर्तमान मामले में धारा 167(2)(ए)(ii) के प्रावधानों का पर्याप्त अनुपालन है - केवल इसलिए कि मंजूरी नहीं दी गई थी अभियुक्त पर मुकदमा चलाने और धारा 309 सीआरपीसी के चरण में आगे बढ़ने के लिए प्राप्त किया गया है, यह

नहीं कहा जा सकता है कि अभियुक्त वैधानिक जमानत का हकदार है, जैसा कि धारा 167 में परिकल्पित है।

मलिन बस्तियों के विकास के लिए दी गई राशि के दुरुपयोग के एक मामले की जांच के दौरान, याचिकाकर्ता, जो एक विधायक था और संबंधित समय में आवास और स्लम क्षेत्र विकास मंत्री के रूप में कार्य कर रहा था, को 11.3.2012 को गिरफ्तार किया गया था। उनके खिलाफ मामला आईपीसी की धारा 34 के साथ पढ़ी जाने वाली धारा 120-बी, 409, 411, 406, 408, 465, 466, 468, 471, 177, 109 और धारा 13(1)(के तहत दंडनीय अपराधों से संबंधित है। भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(1) (डी) और 13(2)। चार अन्य आरोपियों के खिलाफ पहला आरोप पत्र 25.4.2012 को दायर किया गया था और पूरक आरोप पत्र जिसमें याचिकाकर्ता था नाम 1.6.2012 को दायर किया गया था।

अपील की विशेष अनुमति के लिए इस याचिका में, न्यायालय के समक्ष विचार के लिए मुद्दा सीआरपीसी की धारा 167(2) के तहत जमानत पर रिहा होने के याचिकाकर्ता के अधिकार के बारे में था, जैसे कि मामले में आरोप पत्र निर्धारित अवधि के भीतर दायर किया गया हो। उसके विरुद्ध अभियोजन के लिए मंजूरी प्राप्त नहीं की गई जिसके परिणामस्वरूप अपराध का कोई संज्ञान नहीं लिया गया और रिमांड आदेश जारी किए गए और याचिकाकर्ता मजिस्ट्रेट की हिरासत में रहा।

न्यायालय ने याचिका खारिज करते हुए अभिनिर्धारित किया

अभिनिर्धारित: 1.1. सीआरपीसी की धारा 167(2) के तहत संज्ञान लेने से पहले प्रारंभिक चरण में रिमांड की शक्ति अदालत में निहित है। जांच की अवधि के दौरान, आरोपी मजिस्ट्रेट की हिरासत में है, जहां उसे पहली बार पेश किया जाता है। उस चरण के दौरान, धारा 167(2) सीआरपीसी के तहत, मजिस्ट्रेट को आरोपी को पुलिस हिरासत और/या न्यायिक हिरासत दोनों में एक समय में 15 दिनों के लिए अधिकतम अवधि तक हिरासत में भेजने का अधिकार निहित है। 10 वर्ष से कम सजा वाले अपराधों के लिए 60 दिन और 10 साल से अधिक की सजा या यहां तक की मौत की सजा वाले अपराधों के लिए 90 दिन। [पैरा 15 और 18]

1.2. सीआर.पी.सी. की योजना ऐसी है कि एक बार जांच का चरण पूरा हो जाने के बाद, अदालत अगले चरण में आगे बढ़ती है, जो संज्ञान लेना और मुकदमा चलाना है। किसी अभियुक्त को किसी न्यायालय की हिरासत में रहना पड़ता है। एक बार संज्ञान लेने के बाद, रिमांड की शक्ति सीआरपीसी की धारा 309 के प्रावधानों में स्थानांतरित हो जाती है, जिसके तहत ट्रायल कोर्ट को कार्यवाही स्थगित करने या मुल्तवी करने का अधिकार है और, उक्त उद्देश्य के लिए, हिरासत की अवधि को समय-समय पर बढ़ाने का अधिकार है। हालाँकि, धारा 309 सी.आर.पी.सी. के प्रावधान वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू नहीं है। [पैरा 15 और 18]

1.3. ऐसी स्थिति में, जब जांच प्राधिकारी निर्धारित अवधि के भीतर आरोप पत्र दाखिल करने में विफल रहता है

पर आरोपी वैधानिक जमानत पर रिहा होने का हकदार है। ऐसी स्थिति में, आरोपी तब तक मजिस्ट्रेट की हिरासत में रहता है जब तक कि अपराध का विचारण करने वाली अदालत द्वारा संज्ञान नहीं लिया जाता है, जब उक्त अदालत धारा 309 सीआर.पी.सी. के संदर्भ में मुकदमे के दौरान रिमांड के प्रयोजनों के लिए आरोपी की हिरासत लेती है। दोनों चरण अलग-अलग हैं, लेकिन एक दूसरे के बाद आता है ताकि अदालत के पास आरोपी की हिरासत की निरंतरता बनी रहे। [पैरा 18)

1.4. मंजूरी मुकदमा चलाने के लिए एक सक्षम प्रावधान है, जो जांच की अवधारणा से पूरी तरह से अलग है जो आरोप-पत्र दाखिल करने के बाद समाप्त होती है। दोनों अलग-अलग पायदान पर हैं. केवल इसलिए कि आरोपी पर मुकदमा चलाने और धारा 309 सीआरपीसी के चरण में आगे बढ़ने के लिए मंजूरी प्राप्त नहीं की गई है, यह नहीं कहा जा सकता है कि आरोपी वैधानिक जमानत प्राप्त करने का हकदार है, जैसा कि धारा 167 सीआरपीसी में परिकल्पित है। सीआरपीसी की धारा 167 के तहत स्वीकृति की मंजूरी कहीं भी परिकल्पित नहीं है। उक्त धारा विभिन्न प्रकार के मामलों के संबंध में एक निर्धारित अवधि के भीतर जांच को पूरा करने और जांच अधिकारियों के ऐसा करने में विफल रहने पर आरोपी को

जमानत पर रिहा करने के अधिकार पर विचार करती है। एक बार निर्धारित समय के भीतर आरोपपत्र दाखिल हो जाने के बाद डिफ़ॉल्ट जमानत या वैधानिक जमानत देने का सवाल ही नहीं उठता। संज्ञान लिया गया या नहीं यह सीआरपीसी की धारा 167 के संबंध में महत्वपूर्ण नहीं है। [पैरा 17-19)

1.5. मौजूदा मामले में, याचिकाकर्ता की गिरफ्तारी और पुलिस हिरासत में भेजने की तारीख से 90 दिनों के भीतर आरोप-पत्र और पूरक आरोप-पत्र दोनों दायर किए गए थे। यह सच है कि पीसी अधिनियम के प्रावधानों के तहत अभियुक्तों पर मुकदमा चलाने की मंजूरी प्राप्त करने में अभियोजन पक्ष की विफलता के कारण विशेष न्यायालय द्वारा संज्ञान नहीं लिया गया था, लेकिन ऐसी विफलता धारा 167¼2½ सी आर पी सी प्रावधानों के गैर-अनुपालन के बराबर नहीं है।

धारा 167(2)(ए)(ii) के प्रावधानों में आरोप पत्र दाखिल होना ही काफी है

याचिकाकर्ता को यह अधिकार प्राप्त हो सकता था कि आरोप पत्र दाखिल नहीं किया गया है। इस प्रकरण के तथ्यों से आकर्षित नहीं होता।

[पैरा 17 और 18]

1.6. इसलिए, इस न्यायालय का मानना है कि यद्यपि अभियोजन आरोपी पर मुकदमा चलाने के लिए मंजूरी प्राप्त करने में सक्षम नहीं था,

लेकिन वह वैधानिक जमानत प्राप्त का हकदार नहीं था क्योंकि धारा 167(2)(a)(ii) सी आर पी सी के तहत निर्धारित की गई अवधि के भीतर आरोप पत्र दायर किया गया था। [पैरा 19]

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: विशेष अनुमति याचिका आपराधिक संख्या 147/2013

2012 के आपराधिक आवेदन संख्या 4601 में बॉम्बे बेंच की उच्च न्यायालय पीठ औरंगाबाद के निर्णय और आदेश दिनांक 17.12.2012 से।

याचिकाकर्ता के लिए यू.यू. ललित, नगेंद्र राय, हरीश साल्वे, सिद्धार्थ अग्रवाल, श्येल त्रेहन, सुभाष जाधव, अदित एस. पुजारी, अर्जुन एस. सूरी, निखिल पिल्लई, सुदेश कोटवाल, कुमार रचित, लिज़ मैथ्यू।

प्रत्यर्थियों के लिए बी.एच. मार्लापल्ले, अमोल बी. करांडे, कुणाल चीमा, नरेश कुमार, संजय वी. खरदे, सचिन जे. पाटिल, प्रेशित वी. सुरशे, आशा गोपालन नायर।

अल्तमस कबीर, सीजेआई. 1. यह विशेष अनुमति याचिका 17 दिसंबर, 2012 के फैसले और आदेश से उत्पन्न हुई है, जिसे बॉम्बे हाई कोर्ट की औरंगाबाद बेंच ने 2012 के आपराधिक आवेदन संख्या 4601 में पारित किया था, जिसे खारिज कर दिया गया था और विशेष न्यायाधीश को निर्देश दिया गया था। मामले में, आरोप तय करने पर सुनवाई में तेजी लाने के लिए, जैसा कि इस न्यायालय ने 12 अक्टूबर, 2012 को सह-

अभियुक्त प्रदीप रायसोनी द्वारा दायर विशेष अनुमति अपील (आपराधिक) संख्या 6463/2012 का निपटारा करते हुए निर्देश दिया था।

2. इस मामले ने आपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 167(2) के तहत जमानत पर रिहा होने के आरोपी के अधिकार के संबंध में कुछ महत्वपूर्ण मुद्दों पर ध्यान केंद्रित किया है, जिसे इसके बाद "सीआर.पी.सी." कहा जाएगा। इनमें से एक मुद्दा सीआरपीसी की धारा 167(2) के तहत परिकल्पित अवधि से परे भी रिमांड के आदेश पारित करने की मजिस्ट्रेट की शक्ति से संबंधित है। मौजूदा मामले में आरोप पत्र दाखिल होने के बावजूद उसके आधार पर कोई संज्ञान नहीं लिया गया है। हालाँकि, विद्वान मजिस्ट्रेट ने सीआरपीसी की धारा 309 के तहत विचार किए गए चरण पर आगे बढ़े बिना, रिमांड आदेश पारित करना जारी रखा है। वर्तमान मामले की सुनवाई के दौरान सामने आए मुद्दों की सराहना करने के लिए, उक्त प्रश्नों को जन्म देने वाले तथ्यों को संक्षेप में प्रस्तुत करना आवश्यक है, जो निर्धारण के लिए किए गए हैं।

3. अभियोजन पक्ष के मामले के अनुसार, याचिकाकर्ता, सुरेश कुमार भीकमचंद जैन पर जलगांव शहर में मलिन बस्तियों के विकास के लिए आवंटित राशि का दुरुपयोग करने का आरोप है, जब वह आवास और स्लम क्षेत्र विकास मंत्री के रूप में विधानसभा सदस्य के रूप में कार्य कर रहे थे। प्रारंभ में, ठेकेदार और नगर निगम, जलगांव के उपाध्यक्ष होने का दावा

करने वाले कुछ व्यक्तियों के खिलाफ आरोप पत्र दायर किया गया था। इसके बाद, जांच के दौरान याचिकाकर्ता को 11 मार्च, 2012 को गिरफ्तार किया गया था, और जबकि चार अन्य आरोपियों के खिलाफ 25 अप्रैल, 2012 को आरोप पत्र दायर किया गया था, याचिकाकर्ता के खिलाफ 1 जून को एक पूरक आरोप पत्र दायर किया गया था। कुछ समय के लिए, याचिकाकर्ता को अंतरिम जमानत पर रिहा कर दिया गया था, लेकिन गुणावगुण के आधार पर जमानत के लिए उसका आवेदन खारिज होने पर, उसे 5 जुलाई, 2012 को फिर से हिरासत में ले लिया गया।

4. याचिकाकर्ता की ओर से इस बात पर जोर दिया गया है कि, हालांकि, सीआरपीसी की धारा 167(2) के तहत निर्धारित समय के भीतर आरोप पत्र दायर किया गया था, लेकिन याचिकाकर्ता के खिलाफ मुकदमा चलाने की मंजूरी प्राप्त नहीं की गई थी। परिणामस्वरूप, अपराध का कोई संज्ञान नहीं लिया गया। उपरोक्त के बावजूद, रिमांड आदेश दिए जाते रहे और याचिकाकर्ता मजिस्ट्रेट की हिरासत में रहा।

5. इस स्तर पर, यह बताना उचित होगा कि याचिकाकर्ता जालोन पुलिस थाने में पंजीकृत अपराध संख्या 13@2006 धारा 120बी, 409, 411, 406, 408, 465, 466, 468, 471, 177, 109 के साथ पठित धारा 34 भारतीय दंड संहिता दंडनीय अपराधों के संबंध में आरोपी है। भारतीय दंड संहिता को इसके बाद "आईपीसी" के रूप में संदर्भित किया गया है और भ्रष्टाचार

निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(1)(सी), 13(1)(डी) और 13(2) के तहत भी, इसके बाद इसे पी.सी. एक्ट के रूप में संदर्भित किया गया है।

6. विशेष अनुमति याचिका के समर्थन में उपस्थित होते हुए श्री यू.यू. ललित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि चूंकि सीआरपीसी की धारा 167(2) के तहत परिकल्पित 90 दिनों की वैधानिक अवधि समाप्त हो गई थी, याचिकाकर्ता को हिरासत में नहीं भेजा जा सकता था, जैसा कि विद्वान विशेष न्यायाधीश द्वारा किया गया था। जिसने मंजूरी के अभाव में अभी तक संज्ञान नहीं लिया है। श्री ललित ने प्रस्तुत किया कि इसलिए, याचिकाकर्ता तुरंत जमानत पर रिहा होने का हकदार है, क्योंकि 90 दिनों की अवधि के बाद विद्वान मजिस्ट्रेट द्वारा पारित रिमांड के आदेश अधिकार क्षेत्र के बिना थे और इसलिए, तथ्यों और परिस्थितियों में अमान्य थे।

7. श्री ललित ने यह भी प्रस्तुत किया कि सीआरपीसी की धारा 309, जो कुछ परिस्थितियों में अभियुक्तों की रिमांड से भी संबंधित है, पीसी अधिनियम के प्रावधानों से संबंधित आरोपों पर लागू नहीं होती है, क्योंकि इसमें विशेष न्यायाधीश के समक्ष कोई प्रतिबद्ध कार्यवाही नहीं है।

हालाँकि, जहाँ तक धारा 309 सी.आर.पी.सी. का संबंद्ध है, श्री ललित ने प्रस्तुत किया कि यह अपराध का संज्ञान लेने के बाद या विशेष न्यायालय के समक्ष मुकदमा शुरू होने पर ही लागू होगी। विशेष न्यायालय द्वारा संज्ञान न लिए जाने के अभाव में, यह नहीं कहा जा सकता कि

मुकदमा शुरू हो चुका है और इसलिए, याचिकाकर्ता की आगे की हिरासत पूरी तरह से अवैध थी और कानून द्वारा अधिकृत नहीं थी और इसलिए, वह रिहा होने का हकदार था। याचिकाकर्ता पर मुकदमा चलाने के लिए मंजूरी प्राप्त करने में जांच अधिकारियों की विफलता पर उसके द्वारा प्राप्त "अपरिहार्य अधिकार" के आधार पर तुरंत जमानत दी जाए।

8. श्री ललित ने प्रस्तुत किया कि उच्च न्यायालय ने यह मानने में भी गलती की कि मंजूरी के अभाव में, वास्तविक मुकदमे पर रोक नहीं लगाई जा सकती है और इसे आगे बढ़ाया जा सकता है और मंजूरी देने के प्रश्न पर आरोप निर्धारण के चरण में विचार किया जा सकता है। कि क्या अभियुक्त पर मुकदमा चलाने के लिए वास्तव में ऐसी मंजूरी की आवश्यकता थी।

9. अपनी प्रस्तुति के समर्थन में, श्री ललित ने संजय दत्त बनाम राज्य [(1994) 5 एससीसी 410] में इस न्यायालय की संविधान पीठ के फैसले का हवाला दिया और उस पर भरोसा किया, जिसमें उक्त पीठ को सी. आर. पी. सी. की धारा 167(2) के तहत निर्धारित समय के भीतर जांच पूरा न होने के प्रभाव पर विचार करने का अवसर मिला था। विद्वान वकील ने बताया कि उक्त निर्णय में, अन्य बातों के अलावा, यह माना गया है कि 180 दिनों के भीतर जांच पूरी करने में चूक से आरोपी को जमानत पर रिहा होने का पूरी तरह से अपरिहार्य अधिकार नहीं मिलता है। ऐसा

अधिकार आरोप-पत्र दाखिल करने में चूक के समय से उत्पन्न होता है और उसके दाखिल होने तक जारी रहता है, लेकिन आरोप-पत्र दाखिल होने के बाद यह जीवित नहीं रहता है। इसके बाद जमानत देने का फैसला गुण-दोष के आधार पर किया जाएगा। श्री ललित ने प्रस्तुत किया कि उक्त निर्णय में उल्लिखित अपरिहार्य अधिकार उस स्थिति में पूर्ण हो जाएगा जब क़ानून द्वारा निर्धारित वैधानिक अवधि की समाप्ति के बाद, लेकिन आरोप-पत्र दाखिल करने से पहले जमानत के लिए आवेदन दायर किया गया था। ऐसे मामले में, श्री ललित ने प्रस्तुत किया कि संबंधित अभियुक्त जमानत पर रिहा होने के अधिकार का हकदार है।

10. श्री ललित ने नताबर परिदा बनाम उड़ीसा राज्य [(1975) 2 एससीसी 220] में इस न्यायालय के फैसले का भी उल्लेख किया। जिसका निर्णय दो -न्यायाधीशों की खंडपीठ द्वारा किया गया, जिनके पास सीआरपीसी की धारा 167(2) और उसके प्रावधान(ए) के प्रभाव पर विचार करने का अवसर भी था। उक्त मामले में, अंतर्निहित शक्तियों के आधार पर किसी आरोपी की रिमांड का आदेश पारित करने की उच्च न्यायालय की शक्तियों को नकारने की मांग की गई थी। अंततः यह माना गया कि न्यायालय के पास किसी अभियुक्त को किसी भी हिरासत में भेजने की कोई अंतर्निहित शक्ति नहीं होगी, जब तक कि यह शक्ति कानून द्वारा प्रदान नहीं की गई हो। श्री ललित ने आग्रह किया कि चूंकि वर्तमान मामले में याचिकाकर्ता के खिलाफ पारित रिमांड आदेशों में सीआरपीसी की धारा

167(2) या सीआरपीसी की धारा 309 की मंजूरी नहीं थी, इसलिए याचिकाकर्ता वैधानिक जमानत पर तुरंत रिहा होने का हकदार था।

11. महाराष्ट्र राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री संजय वी. खरदे ने उच्च न्यायालय के फैसले का समर्थन किया और आग्रह किया कि सीआरपीसी की धारा 167(2) के तहत आरोप-पत्र दाखिल करने के साथ ही उक्त धारा की शर्तें पूरी हुई और भले ही अभियुक्त पर मुकदमा चलाने के लिए मंजूरी प्राप्त नहीं की गई थी, विचारण न्यायालय मामले में आगे बढ़ने का हकदार था। श्री खरदे ने प्रस्तुत किया कि विचारण न्यायालय द्वारा पारित रिमांड के आदेश रद्द नहीं किए गए थे क्योंकि याचिकाकर्ता की गिरफ्तारी के 90 दिनों के भीतर आरोप पत्र पहले ही दायर किया जा चुका था।

12. संजय दत्त के मामले (सुप्रा) में फैसले का भी जिक्र करते हुए, श्री खारदे ने प्रस्तुत किया कि धारा 167 (2) सीआरपीसी के तहत जमानत पर रिहा होने का आरोपी का "अनिवार्य अधिकार" पूरा होने में डिफ़ॉल्ट है। अनुमत समय के भीतर जांच और आरोप-पत्र दाखिल करना, एक ऐसा अधिकार है जो अभियुक्त को केवल डिफॉल्ट के समय से लेकर आरोप-पत्र दाखिल होने तक लागू करने योग्य होता है और यह आरोप पत्र दाखिल होने पर जीवित नहीं रहता है या लागू करने योग्य नहीं रहता है। तदनुसार, यदि किसी दिए गए मामले में, अभियुक्त उपरोक्त प्रावधान के तहत, 180

दिनों की अवधि या विस्तारित अवधि, जैसा भी मामला हो, की समाप्ति पर जमानत के लिए आवेदन करता है, तो उसे तुरंत जमानत पर रिहा किया जाना चाहिए। हालाँकि, एक बार आरोप-पत्र दाखिल हो जाने के बाद, किसी आरोपी को जमानत देने से संबंधित सिद्धांतों के तहत मामले की योग्यता के संदर्भ में ही जमानत का फैसला किया जाना चाहिए। श्री खरदे ने दोहराया कि मौजूदा मामले में चूंकि आरोप पत्र पहले ही दायर किया जा चुका है, इस तथ्य के बावजूद कि मंजूरी प्राप्त नहीं हुई है, यह नहीं कहा जा सकता है कि रिमांड के आदेश पारित करने के लिए विद्वान मजिस्ट्रेट या विचारण न्यायालय की शक्तियां क्या हैं? समाप्त हो गया, भले ही पीसी अधिनियम के प्रावधानों के तहत आरोपी पर मुकदमा चलाने के लिए मंजूरी नहीं ली गई थी।

13. इस विशेष अनुमति याचिका में उठाया गया प्रश्न सीआरपीसी की धारा 167(2) के संदर्भ में रिमांड के आदेश पारित करने के मजिस्ट्रेट या विचारण न्यायालय के अधिकार से संबंधित है। उसमें निर्धारित अवधि से अधिक. धारा 167(2) सीआरपीसी, जो इस मामले में शामिल मुद्दों को समझने के लिए प्रासंगिक है, यहां नीचे दी गई है:

"167. प्रक्रिया जब जांच चौबीस घंटे में पूरी नहीं हो सकती।

(1) * * *

(2) जिस मजिस्ट्रेट के पास किसी आरोपी व्यक्ति को इस धारा के तहत भेजा जाता है, वह समय-समय पर, चाहे उसके पास मामले की सुनवाई करने का अधिकार क्षेत्र हो या नहीं, आरोपी को ऐसी हिरासत में रखने के लिए अधिकृत कर सकता है, जैसा कि मजिस्ट्रेट उचित समझता है। अवधि कुल मिलाकर पन्द्रह दिन से अधिक नहीं; और यदि उसके पास मामले की सुनवाई करने या उसे सुनवाई के लिए सौंपने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है, और आगे की हिरासत को अनावश्यक मानता है, तो वह आरोपी को ऐसे अधिकार क्षेत्र वाले मजिस्ट्रेट के पास भेजने का आदेश दे सकता है:

बशर्ते.

यदि मजिस्ट्रेट संतुष्ट है कि ऐसा करने के लिए पर्याप्त आधार मौजूद हैं, तो मजिस्ट्रेट आरोपी व्यक्ति को पुलिस की हिरासत के अलावा पंद्रह दिनों की अवधि से परे हिरासत में रखने के लिए अधिकृत कर सकता है, लेकिन कोई भी मजिस्ट्रेट हिरासत में रखने के लिए अधिकृत नहीं करेगा। यदि आरोपी व्यक्ति इस पैराग्राफ के तहत कुल अवधि से अधिक के लिए हिरासत में है - (i) नब्बे दिन, जहां जांच मौत, आजीवन कारावास या कम से कम दस साल की अवधि के कारावास से दंडनीय अपराध से संबंधित है;

(ii) साठ दिन, जहां जांच किसी अन्य अपराध से संबंधित हो

और, जैसा भी मामला हो, नब्बे दिन या साठ दिन की उक्त अवधि की समाप्ति पर, आरोपी व्यक्ति को जमानत पर रिहा कर दिया जाएगा यदि वह जमानत देने के लिए तैयार है और देता है, और प्रत्येक व्यक्ति को इस उप धारा के तहत जमानत पर रिहा किया जाएगा जो इस अध्याय XXXIII के प्रावधानों के तहत रिहा किया गया माना जाएगा;

कोई भी मजिस्ट्रेट इस धारा के तहत आरोपी को पुलिस की हिरासत में रखने की अनुमति नहीं देगा जब तक कि आरोपी को उसके सामने पहली बार व्यक्तिगत रूप से पेश नहीं किया जाता है और उसके बाद हर बार जब तक आरोपी पुलिस की हिरासत में रहता है, लेकिन मजिस्ट्रेट द्वारा अभियुक्त को व्यक्तिगत रूप से या इलेक्ट्रॉनिक वीडियो लिंकेज के माध्यम से पेश करने पर न्यायिक हिरासत में हिरासत को आगे बढ़ाया जा सकता है:

द्वितीय श्रेणी का कोई भी मजिस्ट्रेट, जो उच्च न्यायालय द्वारा इस संबंध में विशेष रूप से सशक्त नहीं है, पुलिस की हिरासत में हिरासत को अधिकृत नहीं करेगा।

स्पष्टीकरण I. - संदेह से बचने के लिए, यह घोषित किया जाता है कि, पैराग्राफ (ए) में निर्दिष्ट अवधि की समाप्ति के बावजूद, आरोपी को तब तक हिरासत में रखा जाएगा जब तक वह जमानत नहीं देता है।

स्पष्टीकरण द्वितीय. यदि यह प्रश्न उठता है कि क्या कोई अभियुक्त व्यक्ति मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किया गया था जैसा कि खण्ड (ख) के अधीन अपेक्षित है, तो अभियुक्त व्यक्ति की पेशी को यथास्थिति, निरोध प्राधिकृत करने वाले आदेश पर उसके हस्ताक्षर से साबित किया जा सकता है या इलेक्ट्रानिक वीडियो संपर्क के माध्यम से अभियुक्त व्यक्ति की पेशी के संबंध में मजिस्ट्रेट द्वारा प्रमाणित आदेश से साबित किया जा सकता है।

परंतु यह और कि 18 वर्ष से कम आयु की स्त्री के मामले में प्रतिपेषण गृह या मान्यता प्राप्त सामाजिक संस्था की अभिरक्षा में निरोध को प्राधिकृत किया जाएगा।

14. उपरोक्त प्रावधान से, यह बिल्कुल स्पष्ट होगा कि मजिस्ट्रेट किसी आरोपी व्यक्ति को पुलिस की हिरासत के अलावा 15 दिनों की अवधि से अधिक हिरासत में रखने का अधिकार दे सकता है, यदि वह संतुष्ट है कि इसके लिए पर्याप्त आधार हैं लेकिन किसी भी मजिस्ट्रेट को आरोपी व्यक्ति को 90 दिनों से अधिक की कुल अवधि के लिए हिरासत में रखने के लिए अधिकृत नहीं किया गया है, जहां जांच मौत, आजीवन कारावास या कम से कम दस साल के कारावास से दंडनीय अपराध से संबंधित है। और 60 दिन जहां जांच किसी अन्य अपराध से संबंधित हो. दूसरे शब्दों में, यदि कोई आरोपी जांच के लिए निर्धारित अवधि पूरी होने के बाद जमानत देने के लिए तैयार था, तो मजिस्ट्रेट के पास हिरासत की अवधि को 90 दिनों

की उक्त अवधि से आगे बढ़ाने का अधिकार नहीं था और, परिणामस्वरूप, उसके पास आरोपी को जमानत पर रिहा करने के अलावा कोई विकल्प नहीं था। धारा 167(2)(ए)(i) और (ii) में प्रयुक्त भाषा यह है कि 90 दिन या 60 दिन की अवधि की समाप्ति पर, जैसा भी मामला हो, आरोपी व्यक्ति को जमानत पर रिहा कर दिया जाएगा, यदि वह जमानत देने के लिए तैयार है और देता भी है। विद्वान मजिस्ट्रेट या विचारण न्यायालय पर निर्देश अनिवार्य प्रकृति का है और उक्त अवधि से परे कोई भी हिरासत अवैध होगी।

15. सीआरपीसी की धारा 167(2) के तहत संज्ञान लेने से पहले प्रारंभिक चरण में रिमांड की शक्ति न्यायालय में निहित है। एक बार संज्ञान लेने के बाद, रिमांड की शक्ति सीआरपीसी की धारा 309 के प्रावधानों में स्थानांतरित हो जाती है, जिसके तहत विचारण न्यायालय को कार्यवाही स्थगित करने या मुल्तवी करने और, उक्त उद्देश्य के लिए, हिरासत की अवधि को समय-समय पर बढ़ाने का अधिकार दिया जाता है। धारा 309(2) सी.आर.पी.सी. ऐसी स्थिति पर विचार करती है जहां न्यायालय किसी अपराध का संज्ञान लेने के बाद या मुकदमे की शुरुआत के लिए किसी भी जांच या मुकदमे की शुरुआत को स्थगित करना आवश्यक समझता है, यह दर्ज किए जाने वाले कारणों से जांच या मुकदमे को ऐसी शर्तों पर उतने समय के लिए स्थगित या मुल्तवी कर सकता है, जो वह उचित समझे और यदि **og** हिरासत में है तो वारंट द्वारा आरोपी को एक

बार में पंद्रह दिनों की अवधि के लिए हिरासत पर ले सकता है। हालाँकि, धारा 309 सी.आर.पी.सी. के प्रावधान का इस मामले के तथ्यों पर कोई अनुप्रयोग नहीं हो सकता।

"309. कार्यवाही मुल्तवी करने या स्थगित करने की शक्ति.- (1) प्रत्येक जांच या विचारण में कार्यवाही यथासंभव शीघ्रता से आयोजित की जाएगी, और विशेष रूप से, जब गवाहों की परीक्षा एक बार शुरू हो गई है, तो इसे दिन-ब-दिन जारी रखा जाएगा जब तक उपस्थित सभी गवाहों की जांच नहीं हो जाती, जब तक कि अदालत को अगले दिन से आगे के स्थगन को दर्ज किए जाने वाले कारणों के लिए आवश्यक नहीं लगता। हमने जो दृष्टिकोण अपनाया है उसकी सराहना करने के लिए, उसे यहां पुनः प्रस्तुत किया गया है।

बशर्ते कि जब जांच या विचारण भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 376 से धारा 376 डी के तहत किसी अपराध से संबंधित हो, तो जांच या विचारण, जहां तक संभव हो, गवाहों की परीक्षा शुरू होने की तारीख दो महीने की अवधि के भीतर पूरा किया जाएगा।

(2) यदि न्यायालय किसी अपराध का संज्ञान करने या विचारण के प्रारंभ होने के पश्चात् यह आवश्यक या उचित समझता है कि किसी जांच या विचारण का प्रारंभ करना मुल्तवी कर दिया जाए या उसे स्थगित कर दिया जाए तो वह समय-समय पर ऐसे कारणों से, जो लेखबद्ध किए

जाएंगे, ऐसे निबंधनों पर, जैसे वह ठीक समझें, उतने समय के लिए जितना वह उचित समझे उसे मुल्तवी या स्थगित कर सकता है और यदि अभियुक्त अभिरक्षा में है तो उसे वारंट द्वारा प्रतिप्रेषित कर सकता हैः

परंतु कोई मजिस्ट्रेट किसी अभियुक्त को इस धारा के अधीन एक समय में पंद्रह दिन से अधिक की अवधि के लिए अभिरक्षा में प्रतिप्रेषित न करेगाः

परंतु यह और कि जब साक्षी हाजिर हों तब उनकी परीक्षा किए बिना स्थगन या मुल्तवी करने की मंजूरी विशेष कारणों के बिना, जो लेखबद्ध किए जाएंगे, नहीं दी जाएगीः

परंतु यह भी कि कोई स्थगन केवल इस प्रयोजन के लिए नहीं मंजूर किया जाएगा कि वह अभियुक्त व्यक्ति को उस पर अधिरोपित किए जाने के लिए प्रस्थापित दण्डादेश के विरुद्ध हेतुक दर्शित करने में समर्थ बनाए।

परंतु यह भी कि-

जहां परिस्थितियां उस पक्षकार के नियंत्रण के परे हैं, के सिवाय पक्षकार के अनुरोध पर कोई स्थगन मंजूर नहीं किया जाएगा।

यह तथ्य कि किसी पक्षकार का अधिवक्ता किसी अन्य न्यायालय में लगा हुआ है, स्थगन का आधार नहीं होगा।

जहां कोई साक्षी न्यायालय में उपस्थित है परंतु पक्षकार या उसका अधिवक्ता उपस्थित नहीं है अथवा पक्षकार या उसका अधिवक्ता यद्यपि न्यायालय में उपस्थित है, लेकिन साक्षी का परीक्षण या प्रतिपरीक्षण करने

के लिए तैयार नहीं है, तब न्यायालय यदि उचित समझता है, साक्षी की यथास्थिति या मुख्य परीक्षा या प्रतिपरीक्षा को अभिमुक्त करते हुए साक्षी के कथन को अभिलिखित करेगा तथा ऐसे आदेश पारित कर सकेगा जैसा वह उचित समझें।

स्पष्टीकरण 1 -यह संदेह करने के लिए पर्याप्त साक्ष्य प्राप्त कर लिया गया है कि हो सकता है कि अभियुक्त ने अपराध किया है और यह संभाव्य प्रतीत होता है कि प्रतिप्रेषण करने पर अतिरिक्त साक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है तो यह प्रतिप्रेषण के लिए एक उचित कारण होगा।

स्पष्टीकरण 2 -जिन निबंधनों पर कोई स्थगन या मुल्तवी करना मंजूर किया जा सकता है, उनके अंतर्गत समुचित मामलों में अभियोजन या अभियुक्त द्वारा खर्चों का दिया जाना भी है।

16. इस समय, हम कुछ तारीखों का उल्लेख कर सकते हैं जो इस मामले के तथ्यों से प्रासंगिक हैं, अर्थात्:

11.03.2012 -याचिकाकर्ता को गिरफ्तार किया गया और पुलिस हिरासत में भेज दिया गया।

25.04.2012 -चार आरोपियों के खिलाफ पहली चार्जशीट दायर की गई

1.06.2012 में पूरक आरोप पत्र दाखिल किया गया जिसमें याचिकाकर्ता का नाम है;

30.07.2012 -विचारण न्यायालय ने जमानत देने के लिए याचिकाकर्ता की प्रार्थना को खारिज कर दिया

13.09.2012 -उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय के आदेश की पुष्टि की

2.10.2012 -धारा 167(2) सीआरपीसी के तहत विचारण न्यायालय के समक्ष आवेदन दायर किया गया।

5.10.2012 -विचारण न्यायालय ने सीआरपीसी की धारा 167(2) के तहत आवेदन खारिज कर दिया

17. उपरोक्त तिथियों से, यह स्पष्ट होगा कि आरोप पत्र और पूरक आरोप पत्र दोनों याचिकाकर्ता की गिरफ्तारी और पुलिस हिरासत में रिमांड की तारीख से 90 दिनों के भीतर दायर किए गए थे। यह सच है कि पीसी अधिनियम के प्रावधानों के तहत अभियुक्तों पर मुकदमा चलाने की मंजूरी प्राप्त करने में अभियोजन की विफलता के कारण विशेष न्यायालय द्वारा संज्ञान नहीं लिया गया, लेकिन क्या ऐसी विफलता सीआरपीसी की धारा 167(2) के प्रावधानों का गैर-अनुपालन है। यह वह प्रश्न है जिसका हम सामना कर रहे हैं। हमारे विचार में,

सीआरपीसी की धारा 167 के तहत मंजूरी देने पर कहीं भी विचार नहीं किया गया है। उक्त धारा विभिन्न प्रकार के मामलों के संबंध में जांच को एक निर्धारित अवधि के भीतर पूरा करने और जांच अधिकारियों के

ऐसा करने में विफल रहने पर आरोपी को जमानत पर रिहा करने के अधिकार पर विचार करती है। किसी अभियुक्त की रिमांड से संबंधित प्रावधानों की योजना,

पहले जांच के चरण के दौरान और उसके बाद, संज्ञान लेने के बाद, यह इंगित करता है कि विधायिका का इरादा कुछ अपराधों की जांच 60 दिनों के भीतर पूरा करने का है और ऐसे अपराधों के लिए मौत की सजा, आजीवन कारावास या कम से कम 10 साल की सजा हो सकती है। 90 दिनों के भीतर **A** ऐसी स्थिति में, जांच अधिकारियों द्वारा जांच पूरी नहीं की जाती है, यदि आरोपी जमानत देने की पेशकश करता है, तो उसे जमानत दिए जाने का अपरिहार्य अधिकार प्राप्त हो जाता है। इसलिए। यदि 61 वें दिन या 91 वें दिन, कोई आरोपी आरोप-पत्र दाखिल न होने की स्थिति में जमानत पर रिहा होने के लिए आवेदन करता है, तो अदालत के पास आरोपी को जमानत पर रिहा करने के अलावा कोई विकल्प नहीं है। उक्त प्रावधान पर विभिन्न मामलों में विचार और व्याख्या की गई है, जैसे कि यहां पहले उल्लेख किया गया है। नटबर परिदा के मामले (सुप्रा) और संजय दत्त के मामले (सुप्रा) में दोनों फैसले ऐसे उदाहरण थे जहां सीआरपीसी की धारा 167(2) में निर्धारित अवधि के भीतर आरोप पत्र दाखिल नहीं किया गया था। और आरोप-पत्र दाखिल करने से पहले जमानत देने के लिए एक आवेदन किया गया है, इस अदालत ने माना कि अभियुक्त को जमानत देने का अपरिहार्य अधिकार प्राप्त है, यदि ऐसा

आवेदन आरोप-पत्र दाखिल करने से पहले किया गया था, लेकिन एक बार आरोप-पत्र दाखिल हो जाने के बाद, ऐसा अधिकार समाप्त हो जाता है और आरोपी योग्यता के आधार पर नियमित जमानत के लिए प्रार्थना करने का हकदार होगा।

18. उक्त मामलों में से कोई भी इस स्थिति से अलग नहीं है कि एक बार निर्धारित समय के भीतर आरोप पत्र दायर किया जाता है, तो डिफ़ॉल्ट जमानत या वैधानिक जमानत देने का सवाल ही नहीं उठता। जैसा कि ऊपर बताया गया है, हमारे विचार में, आरोप पत्र दाखिल करना इस मामले में धारा 167(2)(ए)(ii) के प्रावधानों का पर्याप्त अनुपालन है। संज्ञान लिया गया या नहीं, यह सीआरपीसी की धारा 167 के संबंध में महत्वपूर्ण नहीं है। यदि आरोप-पत्र दाखिल नहीं किया गया होता तो याचिकाकर्ता को जो अधिकार मिल सकता था, वह इस मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होता। केवल इसलिए कि आरोपी पर मुकदमा चलाने और धारा 309 सीआरपीसी के चरण में आगे बढ़ने के लिए मंजूरी प्राप्त नहीं की गई है, यह नहीं कहा जा सकता है कि आरोपी वैधानिक जमानत प्राप्त करने का हकदार है, जैसा कि धारा 167 सीआरपीसी में परिकल्पित है।

सी. आर. पी. सी. की एक योजना ऐसी है कि एक बार जांच चरण पूरा हो जाने के बाद, न्यायालय अगले चरण में आगे बढ़ता है, जो संज्ञान लेना और मुकदमा चलाता है। किसी अभियुक्त को किसी न्यायालय की

हिरासत में रहना पड़ता है। जांच की अवधि के दौरान, आरोपी उस मजिस्ट्रेट की हिरासत में है जिसके समक्ष वह सबसे पहले उपस्थित होता है। उस चरण के दौरान, सीआरपीसी की धारा 167(2) के तहत, मजिस्ट्रेट को आरोपी को अधिकतम अवधि तक एक समय में 15 दिनों के लिए पुलिस हिरासत और/या न्यायिक हिरासत, दोनों, में भेजने का अधिकार निहित है। 10 वर्ष से कम की सजा वाले अपराधों के लिए 60 दिन और जहां 10 साल से अधिक की सजा या यहां तक कि मौत की सजा का प्रावधान है वहां 90 दिन की छूट है यदि कोई जांच प्राधिकारी निर्धारित अवधि के भीतर आरोप-पत्र दायर करने में विफल रहता है, तो आरोपी वैधानिक जमानत पर रिहा होने का हकदार है। ऐसी स्थिति में, आरोपी तब तक मजिस्ट्रेट की हिरासत में रहता है जब तक कि अपराध करने वाले न्यायालय द्वारा संज्ञान नहीं लिया जाता है, जब उक्त न्यायालय धारा के संदर्भ में मुकदमे के दौरान रिमांड के प्रयोजनों के लिए आरोपी की हिरासत लेता है। 309 सी.आर.पी.सी. दोनों चरण अलग-अलग हैं, लेकिन एक दूसरे के बाद आता है ताकि अदालत के पास आरोपी की हिरासत की निरंतरता बनी रहे।

19. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, हमें यह मानने में कोई झिझक नहीं है कि इस तथ्य के बावजूद कि अभियोजन पक्ष आरोपी पर मुकदमा चलाने के लिए मंजूरी प्राप्त करने में सक्षम नहीं था, आरोप पत्र दायर होने के बाद से आरोपी वैधानिक जमानत प्राप्त का हकदार नहीं था। धारा

167(2)(ए)(ii) सीआरपीसी आरोप पत्र निर्धारित के तहत विचारित अवधि के भीतर अच्छी तरह से दायर किया गया। मंजूरी मुकदमा चलाने के लिए एक सक्षम प्रावधान है, जो जांच की अवधारणा से पूरी तरह से अलग है जो आरोप-पत्र दाखिल करने के बाद समाप्त होती है। दोनों अलग-अलग पायदान पर हैं.

20. इस मामले को ध्यान में रखते हुए, विशेष अनुमति याचिका खारिज करने योग्य है और इसे खारिज किया जाता है।

अपील खारिज

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी संदीप आनन्द (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरणः यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।